

## जयमाला

( तारक )

भववन में जीभर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा ।  
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा ॥

( बारह भावना )

झूठे जग के सपने सारे, झूठीं मन की सब आशायें ।  
तन-जीवन-यौवन अस्थिर है, क्षण-भंगुर पल में मुरझायें ॥  
सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या?  
अशरण मृत-काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या?  
संसार महादुखसागर के, प्रभु दुखमय सुख-आभासों में ।  
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी, कंचन-कामिनी प्रासादों में ॥  
मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते ।  
तन-धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड़ चले जाते ॥  
मेरे न हुए ये, मैं इनसे, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ ॥  
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज समरस पीनेवाला हूँ ।  
जिसके शृंगारों में मेरा, यह महंगा जीवन घुल जाता ।  
अत्यन्त अशुचि जड़-काया से, इस चेतन का कैसा नाता ॥  
दिन-रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता ।  
मानस, वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता ॥  
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।  
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल ॥  
फिर तप की शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें ।  
सर्वांग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़ें ॥  
हम छोड़ चलें यह लोक तभी, लोकान्त विराजें क्षण में जा ।  
निज लोक हमारा वासा हो, शोकांत बने फिर हमको क्या ॥  
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो! दुर्नय-तम सत्त्वर टल जाये ।  
बस ज्ञाता-द्रष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर-मोह विनश जाये ॥  
चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी ।  
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी ॥